हिंदी साहित्येतिहास लेखन की परम्परा (भाग 1)

डॉ. कृष्ण कुमार पासवान
सहायक प्राध्यापक
हिंदी विभाग
राम चरित्र सिंह महाविद्यालय
मंझौल, बेगुसराय
सम्पर्क : ksoni.hindi@gmail.com

साहित्य का इतिहास मूलतः किसी भाषा के साहित्य के कार्मिक विकास का दस्तावेज है। इसी के आधार पर उस साहित्य का सुगम अध्ययन अध्यापन संभव है। प्रयेक भाषा के साहित्यिक विकास यात्रा की भांति हिंदी साहित्य की विकास यात्रा का भी अध्ययन विश्लेषण किया गया है जिसे हम हिंदी साहित्येतिहास लेखन परंपरा भी कह सकते हैं।

हिन्दी साहित्येतिहास लेखन के प्रयास :-

1. हिन्दी साहित्य के इतिहास लेखन की परंपरा 19वीं शताब्दी में आरंभ हीती है। 19वीं शताब्दी से पूर्व जो ग्रन्थ मिलते हैं जैसे **'भक्तमाल'-नाभदास, 'कविमाला'-तुलसीदास, 'चौरासी वैष्णवन की वार्ता'-गोकुलनाथ** आदी वे ऐतिहासिक दृष्टिकोण से इतिहास नहीं लगता है, उनमें काल-क्रम, सन्-संवत् आदि का अभाव है।
2. इस संदर्भ में प्रथम प्रयास फ्रेंच विद्वान ***गार्सा-द-तासी*** के ग्रंथ इस्तवार द ला लितरेत्युर ऐन्दुई ऐन्दुस्तानी' के रूप में उपलब्ध होता है। इसका दृष्टिकोण ऐतिहसिक नहीं है और इसमें निम्नांकित दोष बताए जाते हैं -

   अ) हिन्दी व उर्दू के कवियों का अंग्रेजी वर्णमाला के अनुसार वर्णन।

   ब) काल विभाजन व युगीन प्रवृतियों की अवहेलना।
3. दूसरा महत्वपूर्ण ग्रंथ ***शिवसिंह सेंगर*** का शिवसिंह सरोज' (1883) है। इसमें लगभग एक हजार कवियों के जीवन चरित्र एवं उनकी कविताओं के उदाहरण हैं। यह भी ऐतिहासिक दृष्टि से उतना पहत्वपूर्ण नहीं है।

4. **जार्ज ग्रियर्सन** ने 'द मॉडर्न वर्नाक्यूलर लिदरेचर ऑफ हिंदुस्तान' (1888) लिख कर इस परंपरा को बढ़ाया। यह ग्रंथ अपनी निम्नांकित विशेषता के कारण महत्वपूर्ण है। इसमें पहली बार कवियों और लेखकों का काल-क्रमानुसार वर्णन किया गया है। यह हिन्दी साहित्य का विधिवत पहला इतिहास है। युगीन परिस्थितियों का चित्रण है, काम प्रवृत्तियों का उल्लेख है। हिन्दी भाषा को अन्य भाषाओं जैसे संस्कृत, प्राकृत, उर्दू से अलग रखा है।
5. अन्य प्रयास **मिश्रबंधुओं** द्वारा 'मिश्र बंधु विनोद' चार खंड़ों में लिखा गया। पहले तीन भाग 1913 में चौधा भाग 1934 में लिखा गया है। यह रचना सामग्री तो उपलब्ध कराती है क्योंकि इसमें लगभग 5000 कवियों का परिचय दिया गया है किन्तु इसमें ऐतिहासिक दृष्टि नहीं मिलती।
6. पहले व्यवस्थित इतिहास ग्रन्थ के रूप में **आचार्य रामचन्द्र शुक्ल** द्वारा रचित ग्रंथ 'हिन्दी साहित्य का इतिहास' (1929) का उल्लेख किया जा सकता है। इसकी दृष्टि ऐतिहासिक व इसकी प्रस्तुति वैज्ञानिक है। शुक्लजी ने पहली बार साहित्य को आम जनता से जोड़कर देखा। वे मानते हैं 'जबकी प्रत्येक देश का साहित्य वहां की जनता की चित्तवृत्तियों का संचित प्रतिबिंब होता है, तब यह निश्चित है कि जनता की चित्तवृत्ति के परिवर्तन के साथ-साथ साहित्य के स्वरूप में भी परिवर्तन होता चला जाता हैं। आदि से अंत के साथ उनका सामंजस्य दिखाना 'साहित्य का इतिहास' कहलाता है।' आचार्य रामचंद्र शुक्ल जी के आनुसार लोक धर्म साहित्य की महानता का सबसे बड़ा तत्व है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल जी ने इतिहास लेखन में जिस दृष्टिकोण का उपयोग किया है उसे 'विधेयवादी पद्धति' कहते हैं। इस पद्धति के जनक तॉय थे। उनके अनुसार सामाजिक घटनाओं का अध्यायन करते समय जिन तीन संदर्भों पर ध्यान रखाना आावश्यक है, वे हैं - क्षण, वातावरण तथा जाति। आचार्य रामचंद्र शुक्ल जी का साहित्येतिहास दृष्टि प्राय: इन्हीं संदर्भों का ध्यान रखते हुए साहित्य में कारण-कार्य का संधान करता है।

शुक्लजी के इतिहास की सबसे बड़ी विशेषता है 'सही काल निर्धारण तथा नामकरण। उन्होंने हिन्दी साहित्य को चार कालों में विभाजित किया है-

- वीरगाथा काल - 1050 से 1375 (विक्रम संवत)
- भक्तिकाल - 1375 से 1700 (विक्रम संवत)
- रीतिकाल - 1700 से 1900 (विक्रम संवत)
- आधुनिक काल - 1900 से अद्यतन

यह रामचंद्र शुक्ल जी की ऐतिहासिक दृष्टि की परिपक्वता का ही प्रमाण है कि आज तक वीरगाथा काल के अतिरिक्त प्रत्येक युग का नामकरण उन्हीं की दृष्टि के अनुकूल स्वीकार किया जाता है।

आचार्य रामचंद्र शुक्ल जी के इतिहास की कुछ सीमाएं भी हैं। एक तो उन्होंने जिस विधेयवादी पद्धति को स्वीकार किया है वह कवि के व्यक्तित्व के महत्व की प्रमुखता नहीं देती। इसके अतिरिक्त कबीर, छायावाद, भक्तिकाल का उदय, आदिकाल, सिद्ध-नाथ-जैन साहित्य तथा वीरगाथ काल का नामकरण जैसे प्रसंग में उनके दृष्टिकोण विशेष के आग्रह से प्राय: जूझते रहे हैं तथा प्रभावित हुए हैं। मुक्तक साहित्य भी उनकी दृष्टि में अपेक्षित महत्व प्राप्त नहीं कर सका है।

इन सीमाओं के बावजूद शुक्लजी का 'हिन्दी साहित्य का इतिहास' हिन्दी साहित्येतिहास परंपरा की सबसे बड़ी और क्रांतिकारी उपतब्धि है, इसमें कोई संशय नहीं है।

(समाप्त)